International Journal of Social Research and Development
www.socialsciencejournal.net
Online ISSN: 2664-8709
Received: 09-04-2026, Accepted: 10-05-2026, Published: 25-05-2026
Volume 8, Issue 2, 2026, Page No. 83-86

भारत मे महिला विधिक अधिकार: पंचायती राज के संदर्भ में

सुनिता चौधरी
शोधार्थी, लोक प्रशासन विभाग, महात्मा ज्योतिराव फूले, विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान भारत

सारांश
भारत में महिला विधिक अधिकारों की स्थिति सशक्त एवं महिलाओं के स्तर को ऊपर उठाने के लिये सरकार निरन्तर प्रयासरत है। स्वतंत्रता से वर्तमान तक महिलाओं की उन्नति के लिये और समुचित न्याय दिलाने हेतु सरकार एवं स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा निरन्त विधिक अधिकार एवं संरक्षण प्रदान किये जाते है। लेकिन इन सब के बावजूद भी ऐसा महसूस होता है कि महिला वर्ग इन सब प्रयासों से लाभान्वित नहीं हो पा रही है। इसके पीछे महिलाओं की अज्ञानता एवं रूढिवादिता आदि। इन्हीं कारणों से महिलाएं सरकार द्वारा बनाये गये कानूनों को पूर्णत: नहीं जान पाती है और यदि आस–पास से कुछ जानकारी ग्रहण कर भी लेती है तो परिवार एवं समा के कट्टरपंथी सोच के कारण महिलाएं आगे अग्रसर नहीं हो रही है। इसमें कोई संशय नहीं है कि वह लाभान्वित भी होती है, लेकिन आगे आने वाली महिलाओं की संख्या नगण्य ही है। इसलिये समाज के जाग्रत वर्ग का यह दायित्व है कि वह महिलाओं के इस वर्ग को इनके अधिकरों के प्रति जाग्रत एवं सशक्त बनाये। तथापि उपर्युक्त संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त संविधान द्वारा प्रदत्त विधियों द्वारा भी महिला अधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया है। इन उपयुक्त अधिनियमों के क्रियान्वयन से महिलाओं की वैधानिक स्थिति अपेक्षाकृत मजबूत हुई है। यद्यपि कानून ने महिलाओं को अनेक प्रकार की सुरक्षात्मक व्यवस्थाए दी है, किन्तु इन कानूनों का सही परिप्रेक्ष्य में प्रभावी क्रियान्वयन के परिणाम नगण्य है वस्तुतः भारतीय संविधान में कानून के शासन की बुनियादी प्रतिबद्धता महिला और पुरूष समानता में अन्तर्निहित है जो महिलाओं के अधिकार पूर्ण सशक्तिकरण में कितने सफल हो पायेंगे, इसका जबाव भविष्य के गर्भ में है।

मूल शब्द: महिला विधिक अधिकार, पंचायती राज, सरकार के प्रयास, स्वतंत्रता के बाद महिला विकास, स्वयंसेवी संस्थाएँ

राजनीति विज्ञान के सिद्धान्तों में नारीवादी चिन्तन प्रारम्भ से ही गौण रहा है। बीसवीं शताब्दी में "नारीवादी चिन्तन" का प्रार्दुभाव हुआ। जिसमें लैंगिक परिप्रेक्ष्य में सत्ता, अधिकार, प्रभुत्व, अधीनता एवं दमन के बारे में चिन्तकों का ध्यान आकर्षित हुआ है। अधिकार एवं सत्ता विहीन महिलाओं के वास्तविक जीवन, समानता, स्वतन्त्रता एवं विधिक अधिकार की संकल्पनाओं के बारे में विद्यमान धारणाओं ने नारीवादी चिन्तन को प्रेरित करते हुए महिलाओं के बारे में विद्यमान धारणाओं ने नारीवादी चिन्तन को प्रेरित करते हुए महिलाओं के जीवन में भी इन संकल्पनाओं की स्थापना करने के लिए सत्ता संचालन की प्रवृत्ति को तथा उनके उत्पीड़न की गंभीरता को समझाने के लिए चिन्तन आरम्भ हुआ। साथ ही इस बात की आवश्यकता महसूस की जाने लगी की महिलाओं के साथ होने वाले भेदभाव एवं हिंसा के बारे में चिन्तन किया जाए। "नारीवाद सैद्धान्तिक महिला चिन्तन के विशिष्ट अनुभवों मसलन, उपस्थिति, दोयम दर्जा, उनकी ना मालूम सी लगने वाली उपस्थिति, उनके साथ होने वाला भेदभाव, अत्याचार, एवं हिंसा को समाहित करने के लिए विभिन्न शाखाएँ संकल्पनात्मक ढाँचे की नए सिरे से पड़ताल और पुनः परिभाषित है।"[1]

यद्यपि विधिक अधिकारों एवं संरक्षण के बारे में व्यापक विचार–विमर्श एवं चिन्तन होता रहा है परन्तु इस चिन्तन में इस बात पर विशेष जोर नहीं दिया गया है कि महिलाओं को भी पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त होने महिलाओं को जहाँ एक ओर भोग एवं विलास का उपकरण समझा जाता था। वहीं अमानवीय परिस्थितियों में गुलामों की सी जिंदगी व्यतीत कर रही है। इन्हीं स्थितियों ने महिलावादी चिन्तन को जन्म दिया।[2] महिलाओं के विधिक अधिकार एवं संरक्षण की अवधारणात्मक विश्लेषण में सबसे प्रमुख बात यह है कि महिला एक मानव है, स्त्री बुद्धि व बल में पुरुषों के समकक्ष है अतः उसे जीवन के समान अधिकार, स्वतन्त्रता एवं विधिक अधिकार प्राप्त होने चाहिए। इसी विचार को विभिन्न चिन्तकों ने अवधारणात्मक रूप प्रदान किया। इसमें वोल्सटन क्राफ्ट प्रमुख है जिनके महिलाओं के अधिकार एवं संरक्षण के बारे में निम्न विचार रहे है "स्त्रियों का उनके शैशवास्था से बताया जाता है, उनके माँ के उदाहरण से यह शिक्षा दी जाती है कि मानवीय दुर्बलता का अल्प ज्ञान जिसे उचित ही चालाकी का नाम दिया गया है, मिजाज की मृदुलता, ऊपरी आज्ञाकारिता और बचकाने प्रकार के स्वामित्व के कर्त्तव्यनिष्ठ अवधान, उन्हें पुरुषों की सुरक्षा सुलभ करवायेगा, और यदि वे कहीं रूपसी हुई तो अन्य सभी वस्तुएं अनावश्यक होगी, कम से कम उनके जीवन के बीस वर्षो तक ।"[3] उन्होंने मुख्यतः महिलाओं के बारे में रूसो के विचारों पर कडा प्रहार करते हुए पूरे यूरोप का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया था। उन्होंने चार स्थितियों पर पुरुष प्रधान समाज को चुनौती दी – सर्वप्रथम उन्होंने इस बात को स्वीकार करने से इन्कार किया की स्त्रियां बुद्धि के मामले में पुरुषों से कमजोर है, नाजुकता एवं सतहीपन उनका नैसर्गिक गुण है।

द्वितीय, यदि पुरुष और महिलाएँ बुद्धि के समान अधिकारी है। तो उसका उपयोग करने की शिक्षा भी उन्हें भी समान रूप से दी जानी चाहिए।

तीसरा, चूँकि पुरुषों और महिलाओं की समान मानसिकता ईश्वर प्रदत्त बुद्धि के अधिकार की हिस्सेदारी पर आधारित है इसलिये इन दोनों लिंगों के नैसर्गिक गुण समान होने चाहिए।

चौथा, समान गुणवत्ता के विचार के आधार पर समान अधिकारों की बात को उठाया, आगे चलकर राजनीति उदारवाद की विचारधारा बन गया ।"[4]

वोल्सटन क्राफ्ट के समान जे. एस. मिल ने भी इस बात को भी स्वीकार किया है कि महिलाओं को पुरुषों के सामान प्राकृतिक अधिकार होने चाहिए। वोल्सटन क्राफ्ट व मिल दोनों ने माना है। कि महिलाएं मानव जाति की सदस्य होने के नाते तार्किक विचार में सक्षम होती हैं और पुरुषों की तरह समान प्राकृतिक अधिकारों की हकदार होती है। स्त्रियों पर आरोपित पतिव्रता, मृदुता और आज्ञाकारिता के गुण सामाजिक अनुकूलन की उपज होते हैं जो महिलाओं की प्राकृतिक विशिष्टताएं होने के बजाय मुख्यतः यौन वस्तुओं के रूप में उन्हें गढ़े जाने का नतीजा होती है उनकी

कथित प्राकृतिक कमजोरियां उनकी अतार्किकता और उनके स्वच्छन्द मन, वास्तव में उनके शिक्षा की कमी, चयन की आजादी का अभाव, पुरुषों पर निर्भरता तथा उनके दोषपूर्ण समाजीकरण की उपज होती है। उन दोनों ने काफी उग्र लगने वाला प्रस्ताव रखा कि अपने पतियों के दुर्वव्यवहार से बचने के लिये महिलाओं के पास सहारा होना चाहिए।

मार्क्सवादी चिन्तन ने महिला अधिकरों से सन्दर्भित एंगेल्स की पुस्तक "फैमिली, प्राईवेट प्रोपर्टी एण्ड ऑरिजन ऑफ स्टेट" को लिया जा सकता है। इसमें उन्होंने मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद के सिद्धान्त का प्रयोग करते हुए प्रारम्भिक कबीलाई समाज से लेकर वर्तमान काल के परिवारों के उदय से सम्बंधित सम्पूर्ण इतिहास पर प्रकाश डाला। एंगेल्स इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि विवाह में पुरुष की श्रेष्ठता उसकी आर्थिक श्रेष्ठता का सीधा परिणाम है। आर्थिक श्रेष्ठता समाप्त हो जाने पर वैवाहिक जीवन में पुरुष की श्रेष्ठता समाप्त हो जाएगी। 1884 में लिखित इस पुस्तक में उन्होंने महिलाओं के रोजगार को ही एक प्रगतिशील स्थिति बताया। पति पर महिलाओं की आर्थिक निर्भरता का यह अर्थ है कि "परिवार के दायरे में पति बुर्जुआ होता है तथा पत्नी सर्वहारा ।" नारी मुक्ति की पहली शर्त यह है कि सभी नारियों को सार्वजनिक उद्यम में ले आना होगा ।" इस तरह वे साध्य व साधनों के आधार पर पारिवारिक संरचना का पुर्ननिर्माण करना चाहते थे।"[5]

नारी अधिकारों की दिशा में सीमोन द बाउवा विशेष रूप से उल्लेखनीय नाम है। जिन्होनें अपनी पुस्तक "दि सैकण्ड सेक्स" में उल्लेखित किया है कि स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि बनायी जाती है।" सीमोन ने इस आधुनिक नारी अधिकारवादी विचारधारा की आधारशिला रखी। जिसमें नारी मुक्ति की अनिवार्य शर्त के रूप में नारी को अपने नारीपन से मुक्त होना बताया गया। मातृत्व एक नारी के लिये सुखदायीं भी हो सकता है, इस बात को स्वीकार करने से साफ तौर पर इंकार किया तथा स्त्री के मासिक धर्म, गर्भावस्था, प्रजनन और दुग्धपान की तरह की प्रक्रियाओं पर गहरी नाराजगी व्यक्त की। इन सबको, स्त्रीकाया द्वारा स्त्रियों के लिये तैयार किए गए जंजाल की तरह बताया। हाँलाकि वे इस बात से सहमत नहीं थी कि "स्त्री की योनि उसे हमेशा घुटनों के बल रहने पर मजबूर करती है।" लेकिन यह जरूर मानती थी कि, अपनी शारीरिक सीमाओं से उबर कर ही औरत एक पूर्ण मनुष्य बन सकती है। इससे एक तर्क यह पैदा होता है कि स्त्री अपने अस्तित्व को गंवाकर ही मनुष्यता हासिल कर सकेगी बाद के दिनों में सीमोन ने अपने एक साक्षात्कार में यह स्वीकार किया था कि यह अच्छी बात है कि अब महिलाएं अपनी काया को लेकर किसी प्रकार की शर्मिन्दगी महसूस नहीं करती। लेकिन फिर भी उसने स्त्री काया में किसी भी प्रकार की विशेषता को स्वीकारने से साफ इन्कार किया है। "[6]

60 के दशक में एक विस्फोट की तरह पश्चिमी दुनिया में जिस नारी अधिकारवाद ने जन्म लिया उसकी एक महत्वपूर्ण कृति के रूप में बेट्टी फ्रिडेन की पुस्तक "दी फेमिनाइन मिस्टीक" को लिया जा सकता है। 1963 में प्रकाशित इस पुस्तक में दूसरे विश्व युद्ध के बाद की अमरीकी समाज में महिला स्थिति पर गहरा असन्तोष व्यक्त किया गया। इंग्लैण्ड की लेखिका सुशान बैसनेट ने अपनी पुस्तक "फेमिनिस्ट एक्सपीरियेंसेज" में इस पुस्तक के प्रकरणों को उद्धृत करते हुए अमरीकी महिलाओं में व्याप्त असंतोष का चित्र खींचा।"[7]

महिला अधिकार व संरक्षण के विचार ने एक लम्बी यात्रा तय करने के पश्चात अपने आपको स्थापित किया। महिला की मानव के रूप में पहचान से लेकर प्रारम्भ हुए इस संघर्ष में क्रिश्चयन डे विजन और मेरी वोल्सटन क्राफ्ट से लेकर सीमोन द बाउवा, बेट्टी फ्रिडेन इत्यादि का योगदान अविस्मरणीय रहा है। इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप वर्तमान में विभिन्न देशों द्वारा अपने संविधान और विधिक कानूनों के माध्यम से विभिन्न महिला अधिकारों को स्वीकृत किया गया है जिससे महिला स्थिति सुधार की ओर अग्रसर है। भारत में भी इन्ही प्रेरणाओं के साथ महिला अधिकारों को अपने संविधान में स्थान दिया गया तथा इनके साथ विभिन्न कानूनों द्वारा उनकी पुष्टि की गई है। "सभ्य समाज की किसी भी परिकल्पना में मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय एवं समता के आदर्श पथिक आस्थाओं, परम्पराजन्य विश्वासों तथा अहम्वादी उदघोषों से निश्चय ही वरीय है। महिला विधिक संरक्षण के अधिकारों का प्रश्न उक्त आदर्शों का पारदर्शी मापदण्ड है।[8]

भारत में महिलाओं को अधिकार एवं सरंक्षण के लिए भारतीय संविधान एवं विधिक व्यवस्था में अनेकों प्रावधान किये गये हैं। भारतीय संविधान के अन्तर्गत प्रदान किये गये सभी विधिक अधिकार जो महिलाओं को प्रदान किय गये, वे अधिकार महिलाओं को संरक्षण प्रदान करते हैं। सर्वप्रथम प्रस्तावना के तहत् भारत के समस्त नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्राप्त करना संविधान में नागरिकों को प्रदान किये गये हैं, वे सभी महिलाओं को भी प्राप्त है। अनुच्छेद 14 से 18 में समता का अधिकार प्रदान किया गया है। इनमें विशेषतया अनुच्छेद 15 की कोई भी बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध बनाने से नहीं रोकगी। स्त्रियों और बालकों की स्वाभाविक प्रकृति ही ऐसी होती है; जिसके कारण उन्हें विशेष अधिकार की आवश्यकता होती है। अनुच्छेद 19 में छः स्वतन्त्रताएँ सभी नागरिकों को प्रदान की गयी है। इनमें महिला भी सम्मिलित है। अनुच्छेद 20 स्त्रियों को अपराधों के लिए दोष सिद्धि के विषय में अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 21 भारत के सभी नागरिकों के जीवन एवं दैहिक स्वतन्त्रता को अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 22 कुछ दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण प्रदान करता है। अनुच्छेद 23 एवं 24 में शोषण के विरुद्ध अधिकार प्रदान किये गये हैं; जो स्त्री पर भी उसी रूप में लागू होते हैं। अनुच्छेद 25 से 28 धर्म स्वातंत्र्य का अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 29 एवं 30 में संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार प्रदान किय गये है। इन सभी अधिकार का वर्णन अनुच्छेद 32 में किया गया है जिसके अन्तर्गत यह प्रावधान है कि मौलिक अधिकारों के हनन की अवस्था में उनके संरक्षण के लिए न्यायपालिका की शरण ले सकता है। इसे संवैधानिक उपचारों का अधिकार कहा गया है।

मौलिक अधिकारों द्वारा प्राप्त उपयुक्त अधिकारों को अतिरिक्त भारतीय संविधान के अन्तर्गत कुछ अन्य उपबन्ध भी किये गये हैं, जिनसे स्त्री अधिकार सम्पन्न होता है। सविधान के भाग चतुर्थ में वर्णित राज्य नीति निदेशक तत्वों में महिला अधिकारों की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। इनमें अनुच्छेद 38, 39, 42 और 44 को प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। इसमें 39 विशेष रूप से उल्लेखनीय है इसके अन्तर्गत राज्य अपनी नीति विशिष्टता इस प्रकार संचालन करेगा कि पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविकोपार्जन के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो, पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान न्याय एवं निशुल्क विधिक अधिकार का भी उपबन्ध करता है। इस तरह राज्य के नीति निदेशक तत्व भारतीय महिला को सामाजिक आर्थिक और कानूनी रूप से अधिकार सम्पन्न करने की बात कहते है। संविधान के अन्य उपबन्धों में अनुच्छेद 51 (क), 243 घ (1), (2), (3), (4) एवं 243 (न) को महिला अधिकार के संदर्भ में उल्लेखित किया जा सकता है।"[9]

विभिन्न संहिताओं के तहत् मुख्य रूप में भारतीय दण्ड संहिता और आपराधिक प्रक्रिया संहिता को लिया जा सकता है। भारतीय दण्ड संहिता ने महिलाओं के अधिकार हेतु विशेष प्रावधानों की व्यवस्था की गयी है। 1860 में निर्मित भारतीय दण्ड संहिता ने स्वतन्त्रता पूर्व ही स्त्री को अनेक अधिकार प्रदान किये गये थे। इसकी धारा 10 स्त्री एवं पुरुष दोनों को मानव घोषित करती है।

धारा 96 सभी नागरिकों को अपनी निजी सुरक्षा का अधिकार सौंपती है।
धारा 100 इस अधिकार की वृद्धि करते हुए कहती है कि यदि बलात्संग, व्यपहरण या अपहरण के आशय से हमले के प्रतिरोध में हमलावर की जान चली जाये तो यह अपराध नहीं होगा। इसके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता की अनेक धाराएं महिला अधिकार की पुष्टि करती है। 10 इस तरह यह संहिता स्त्री पर होने वाले अत्याचार एवं हिंसा के विरुद्ध उसे संरक्षण प्रदान करती है। इसके अन्तर्गत स्त्री के विरूद्ध किये गये अपराधों के दण्डों का निर्धारण किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि घरेलू हिंसा निरोध अधिनियम से पूर्व घरेलू हिंसा के सभी मामले संहिता कि धारा 498 (क) के अन्तर्गत दर्ज किये जाते थे।
दण्ड प्रक्रिया संहिता में भी स्त्रियों के लिए कुछ विशेष प्रावधान किये गये है, जो उसे विधिक सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसमें धारा 47 (2) स्त्रियों के होने पर किसी अधिकारी के तलाशी हेतु प्रवेश वर्जित करती है। धारा 51 (2) स्त्री की तलाशी स्त्री द्वारा ही लिये जाने का उपबन्ध करती है। धारा 53 (2) के अन्तर्गत स्त्री की चिकित्सा परीक्षा किसी पंजीकृत स्त्री चिकित्सक द्वारा ही की जायेगी। धारा 98 स्त्री को विधि विरुद्ध निरोध के विपरीत उसे स्वतन्त्रता प्रदान करने की बात कहती है। धारा 125 पत्नी, सन्तान एवं माता पिता को भरण–पोषण का विधिक अधिकार प्रदान करती है। 14
महिलाओं के उत्पीड़न एवं अत्याचार से संरक्षण के लिए भारतीय संसद ने समय–समय पर विभिन्न अधिनियम पारित किये गये अधिनियम विशिष्टताया महिला अधिकार को दृष्टिगत रखकर निर्मित किये गये हैं। ये कानून भारतीय संविधान एवं विभिन्न संहिताओं में स्त्रियों को प्राप्त संरक्षण की न केवल पुष्टि करते हैं अपितु उनको सशक्त रूप से लागू भी करते हैं। इन अधिनियमों में मुख्य रूप से हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, विशेष विवाह अधिनियम 1954, दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961, अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1956, चिकित्सकीय गर्भ समापन अधिनियम 1971, गर्भधारण पूर्व एवं प्रसव पूर्व परीक्षण तकनीक अधिनियम 1994, सती कर्म (निवारण) अधिनियम, 1987 घरेलू हिंसा से महिला का संरक्षण अधिनियम, 2005, स्त्री का अशिष्टरूपण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1896, बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम 1961 एवं हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 इत्यादि को सम्मिलित किया जा सकता है। प्रस्तुत लेख में महिला विधिक अधिकारों का वर्णन व्यापक रूप से किये जाने के साथ–साथ महिला पर किये गये अत्याचारों के लिए दण्ड का निर्धारण भी किया गया है।
उपबन्धों और अधिनियमों के क्रियान्वयन से महिला विधिक स्थिति अपेक्षाकृत सशक्त हुई है। यद्यपि कानूनों ने महिलाओं को अनेक प्रकार के उन्नायक, सुरक्षात्मक, भरण–पोषण आदि विकासात्मक निशुल्क शिक्षा कामकाजी महिलाओं के अधिकार एवं स्वस्थ वातावरण की सफल आदि व्यवस्थाएँ की है, किन्तु उनके सही परिप्रेक्ष्य में प्रभावी क्रियान्वयन के वांछित परिणाम व्यापक रूप से समाज में दिखाई नहीं पड़ते हैं। इधर हमारे न्यायालयों विशेषतया उच्च एवं उच्चतम न्यायालय प्रभावी उल्लेखनीय भूमिका निभा रहे हैं। इस सम्बन्ध में न्यायपालिका द्वारा किए गए कुछ निर्णय इसके प्रमाण है। उदाहरणार्थ 1997 में विशाखा बनाम स्टेट ऑफ राजस्थान बाद में सर्वोच्च न्यायालय ने महत्वपूर्ण निर्णय दिया जिसमें कार्यस्थल पर महिला उत्पीड़न को स्पष्ट कर इसे परिभाषित किया गया तथा इसे रोकने के लिए दिशा निर्देश जारी किये गए। इससे कामकाजी महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ हुई है। इसी प्रकार अन्य वाद उदाहरण स्वरूप लिये जा सकते है– उपेन्द्र बख्शी बनाम स्टेट ऑफ यू.पी. (1998), ऐपैरेल एक्सपोर्ट, प्रमोशन काउंसिल बनाम ए. के. चौपड़ा (1999) आदि। महिलाओं के सम्बन्ध में सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालायों का दृष्टिकोण महिलाओं के प्रति सहानुभूतिपूर्ण एवं सकारात्मक रहा है।
भारतीय महिलाओं के विधिक अधिकारों की प्रभावशीलता भारतीय संविधान में महिलाओं को पुरुषों के समकक्ष दर्जा प्राप्त है। लेकिन वास्तविकता यह है कि कानून की नजर में महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की है। विवाह, तलाक, काम, सम्पत्ति में अधिकार, गुजारा भत्ता कोई ऐसा अधिकार नहीं है, जहाँ समानता के नाम पर महिलाओं के साथ भद्दा मजाक न किया गया हो। भारतीय दण्ड सहिंता की धारा 125 के अन्तर्गत तलाकशुदा महिला अपने पूर्व पति से गुजारा भत्ता हासिल कर सकती है। वास्तविकता में बहुत सी महिलाओं को तो केवल दो सौ रूपये या इससे भी कम मिल रहे हैं। दरअसल, जब पाँचवें दशक में यह राशि निर्धारित की गई थी। लेकिन मूल्य सूचकांक से न जुड़ने के कारण महँगाई कहाँ की कहीं पहुँच गई और अधिकतम गुजारा भत्ता वहीं रह गया। यद्यपि अकेले कानून के द्वारा महिलाओं की दुनिया को नहीं बदला जा सकता। दहेज और घरेलू हिंसा से सम्बन्धित कानून कड़े करने के बावजूद भी इनकी दर में कमी होने के अलावा बढ़ोतरी हो रही है। लेकिन यह भी कहा जा सकता है कि यदि वे कानून न बनाते तो दहेज और हिंसा की घटनाओं में और भी बढ़ोत्तरी होती। आर्थिक मामलों में कानून खासतौर पर महिलाओं के हित सार्थक भूमिका निभा सकता है। इसमें कोई दो राय नहीं है कि महिलाओं को वास्तविक समानता और स्वतन्त्रता तब तक हासिल नहीं हो सकती, जब तक वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं हो जाती। इसके लिए महिलाओं को कामकाजी होने के साथ–साथ सम्पत्ति में अधिकार दिया जाना जरूरी है।
भारतीय हिन्दू महिलाओं को सम्पत्ति में बराबरी का अधिकार दे दिया गया है; लेकिन इसके पीछे कई किन्तु परन्तु लगे हुए है। महिलाओं के साथ स्वयं अर्जित सम्पत्ति और पुश्तैनी सम्पत्ति में अन्तर के आधार पर भेदभाव किया जाता है। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 6 के अन्तर्गत लड़कियों को माता–पिता की स्वयं अर्जित सम्पत्ति में बराबरी का हिस्सा मिल जाता है बशर्ते वे एक परिवार की सदस्य हो। लेकिन पुश्तैनी या संयुक्त परिवार की सम्पत्ति में लड़कियों की कोई हिस्सेदारी नहीं है। तीन पीढ़ियों के पश्चात् स्वयं अर्जित सम्पत्ति संयुक्त सम्पत्ति में बदल जाती है। कानून के कारण महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन न आने के अनेक कारण है। सर्वप्रथम सम्पूर्ण कानूनी व्यवस्था पितृसत्तात्मक समाज के पक्ष में खड़ी नजर आनी है दूसरा कानून की धाराएँ धारदार नहीं है। तीसरा अधिकांश महिलाओं को कानूनी जानकारी नहीं है जिस कारण वे इसका लाभ नहीं उठा पाती। साथ ही यह भी महत्वपूर्ण है कि जिन महिलाओं को जानकारी है भी, उलझी हुई कानूनी प्रक्रिया और भ्रष्टाचार के कारण इसके पचड़े में नहीं पड़ना चाहती। सरकार द्वारा बनाए गए कानून अधिकांश महिलाओं पर कोई प्रभाव नहीं डालते है। भारी–भरकम कानूनों के होते हुए महिलाओं में असुरक्षा की भावना बढ़ती जा रही है। महिलाएँ कार्यस्थल में तो असुरक्षित है ही; घर पर भी हिंसा से पीड़ित होना पड़ता है।
अनेक धर्मों की महिलाओं के अधिकारों न केवल उनके पर्सनल लॉ बोर्ड के हाथों में देकर महिलाओं के साथ एक और खिलवाड़ किया गया है। उदाहरणतः महिलाओं से सम्बन्धित मामलों की सुनवाई मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के अनुसार होती है, हिन्दू महिलाओं सम्बन्धित मामले हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के तहत् आते है और इसी प्रकार ईसाई महिलाओं को भी अपने अधिकार पाने के लिए ईसाईयों के पर्सनल लॉ का पिछलग्गू बनना पड़ता है। व्यवहारतः ये कानून समुदाय की कट्टरपंथी ताकतों द्वारा निर्धारित निर्देशित होते हैं।

निष्कर्ष

भारत में महिला विधिक अधिकारों की स्थिति सशक्त एवं महिलाओं के स्तर को उपर उठाने के लिये सरकार निरन्तर प्रयासरत है। स्वतंत्रता से वर्तमान तक महिलाओं की उन्नति के लिये और समुचित न्याय दिलाने हेतु सरकार एवं स्वयं सेवी

संस्थाओं द्वारा निरन्तर विधिक अधिकार एवं संरक्षण प्रदान किये जाते हैं। लेकिन इन सब के बावजूद भी ऐसा महसूस होता है कि महिला वर्ग उन सब प्रयासों से लाभान्वित नहीं हो पा रही है। इसके पीछे महिलाओं की अज्ञानता एवं रूढिवादिता आदि। इन्हीं कारणों से महिलाएं सरकार द्वारा बनाये गये कानूनों को पूर्णतः नहीं जान पाती है और यदि आस–पास से कुछ जानकारी ग्रहण कर भी लेती है तो परिवार एवं समाज के कट्टरपंथी सोच के कारण महिलाएं आगे अग्रसर नहीं हो रही है। उसमें कोई संशय नहीं है कि वह लाभान्वित भी होती है, लेकिन आगे आने वाली महिलाओं की संख्या नगण्य ही है।

इसलिये समाज के जाग्रत वर्ग का यह दायित्व है कि वह महिलाओं के इस वर्ग को उनके अधिकरों के प्रति जाग्रत एवं सशक्त बनाये। तथापि उपर्युक्त संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त संविधान द्वारा प्रदत्त विधियों द्वारा भी महिला अधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया है। इन उपयुक्त अधिनियमों के क्रियान्वयन से महिलाओं की वैधानिक स्थिति अपेक्षाकृत मजबूत हुई है। यद्यपि कानून ने महिलाओं को अनेक प्रकार की सुरक्षात्मक व्यवस्थाएं दी हैं, किन्तु उन कानूनों का सही परिप्रेक्ष्य में प्रभावी क्रियान्वयन के परिणाम नगण्य है वस्तुतः भारतीय संविधान में कानून के शासन की बुनियादी प्रतिबद्धता महिला और पुरुष समानता में अन्तर्निहित है जो महिलाओं के अधिकार पूर्ण सशक्तिकरण में कितने सफल हो पायेंगे, इसका जबाव भविष्य के गर्भ में है।

सन्दर्भ सूची

1. आर्य, साधना, मेनन निवेदिता, लोकनीति जिनी, नारीवादी राजनीति संघर्ष व मुद्दे, दिल्ली, 2001, पृ. 20
2. नगेन्द्र शिलजा, विमिन्स राइट्स, ए.डी.बी. पब्लिशर्स, जयपुर, 2006, पृ. 2
3. क्राफ्ट मेरी वोल्सटन, ए विन्डीकेशन ऑफ दी राइट्स ऑफ विमिन, (मीनाक्षी द्वारा वोल्सटन की पुस्तक का हिन्दी अनुवाद : स्त्री अधिकारों का औचित्य साधन), राजकमल, दिल्ली, 2003, पृ. 41
4. माहेश्वरी, सरला, नारी प्रश्न, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1998, पृ. 15
5. सीमन, उथरा, पेट्रीआर्की थ्योरिटिकल पॉश्चूलेट्स एण्ड एम्पीरीकल फाइडिंग्स, सोश्योलोजिकल बुलेटिन, जर्नल आफ दी इण्डियन सोश्योलोजिकल सोसायटी, वोल. 58, नं. 29, मई– अगस्त 2009, पृ. 254–255
6. ए. स्वार्जर, सीमाने द ब्रूवो टूडे कर्वसेसन्स, 1972–1982, माहेश्वरी सरला, , नोट–34, पृ. 34–35
7. डोनोविन, जोसेफिन, फेमिनिस्ट थ्योरी कोन्टीन्यूअम, न्यूयार्क, लन्दन, 2000, पृ. 158 159
8. कौशिक, आशा, एक समान नागरिक संहिता एवं महिला अधिकार, जैन प्रतिभा एवं शर्मा संगीता, भारतीय स्त्री सांस्कृतिक सन्दर्भ, रावत पब्लिकेशन, जयपुर एवं नई दिल्ली, 1998, पृ. 204
9. महावर, सुनील, राज्य एवं महिला मानवाधिकार, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2011, पृ. 237–238
10. भारतीय दण्ड संहिता के तहत् महिला संरक्षण को पुष्ट करने वाली